मनुष्य बनो

दा० मू
२५.०

शरण

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम,

निष्काम कर्म,

ब्रह्म

पालन,

BANSWADI

...सक
...याल फकीरचन्दजी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर (पंजाब)

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य २५.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ४२	मई-९३	अङ्क— ८

प्रेम धारा से :

शब्द

दिल दुःखाना छोड़कर, तुम प्रेम करना सीख लो।
जख्म करना बन्द कर, तुम जख्म भरना सीख लो।१।
निचले स्थानों से ऊपर, चढ लो तुम चढ़ लो।
बीच दोनों आँखों के तुम, सुरता धरना सीख लो।२।
छोड़ दो आदत बुरी, संगत बुरी को छोड़ दो।
जो बुराई को दिखाये, उससे लड़ना सीख लो।३।
नाम गुरु से मिल गया, नामी से अब जल्दी मिलो।
बैठ किस्ती नाम की, भव पार करना सीख लो।४।
बन्द कर लो आंखें दो, आये न आँखों में कोई।
गुरु की मूरत दिल के, शीशे में जड़ना सीख लो।५।
इन्द्रियों को करके काबू, मन को काबू में करो।
मौत न आये दोबारा, ऐसा मरना सीख लो।६।
बन गये इन्सान जब, इन्सानियत से काम लो।
अपने अन्दर की किताबें, गुरु से पढ़ना सीख लो।७।
कल क्या हो जायेगा, जल्दी करो जल्दी करो।
सोहवते 'गाफिल' से बहरे, दुनियां तरना सीख लो।८।

प्रशँसक से सावधान

तुम्हारी प्रशंसा कर अपना काम निकाल ले जाने वालों की कमी नहीं है। स्वयं तुम भी उनसे अपनी तारीफ सुनकर मद-मस्त हो जाते हो, प्रसन्नता में फूल उठते हो, नीर-क्षीर विवेक विलुप्त कर बैठते हो प्रशंसकों को गले लगाते हो, किंतु तुम यह विस्मृत कर बैठते हो कि तनिक सी प्रशंसा में बह जाना तुम्हारी एक मानसिक निर्बलता है।

आज के युग में लोग दो ही इच्छाओं की पूर्ति के हेतु एड़ी-चोटी का पसीना एक करते हुए प्रतीत होते हैं।—प्रथम रुपया, दूसरी प्रशँसा। बड़े-बड़े नेता, त्यागी, महात्मा, विद्वान वक्ता, लेखक, दानी, दार्शनिक—जिसे भी देखिये वह प्रशंसा या सम्मान चाहता है। सम्मान प्राप्ति के लिये वह जो कहो वहीं कर डालने को तैयार रहता है। विद्वान चाहे आर्थिक सम्पन्नता की कामना न करे, किन्तु भूखे पेट रह तथा फटे वस्त्र पहन कर भी वह अपनी प्रशँसा अवश्य चाहता है। वह चाहे और सब छोड़ दे, प्रशँसा की भूख को नहीं छोड़ पाता।

प्रशँसा सुनकर हमारा 'अहं' तृप्त होता है। हम मद-मस्त हो उठते हैं और अन्दर ही अन्दर अपनी महत्ता का अनुभव करते हैं। अहं-तृप्ति से मनुष्य अपनी निर्बलताओं को आँखों से ओझल करने का विफल प्रयत्न करता है। दूसरे के द्वारा अपनी प्रशंसा सुनकर भले ही हम अपनी दुर्बलताओं के प्रति वीतराग हो जांय, अपने-आपको लाख अच्छा समझें किन्तु निर्बलतायें तो ज्यों की त्यों रहेंगी ही। प्रशँसा से हम थोड़ी देर कल्पना के सुखद जगत में विचरण कर लें,

किंतु संसार और समाज की कटुता ओर कठोरता से हम आंखें नहीं मूंद सकते ।

आप निरन्तर मिलते जुलते अपने प्रशंसकों की संख्या बढ़ाने में व्यस्त हैं । भिन्न भिन्न अवसरों पर उन्हें उपहार भेजते हैं, दावतें देते हैं, मुबारकवाद देकर प्रसन्न करने की चेष्टा करते हैं, किन्तु आपको यह ज्ञात नहीं कि प्रशंसा की भित्ति कमजोर बालू पर खड़ी होती है । अवसर-अटकनों पर सब छोड़ भागते हैं । जब तक आप प्रतिष्ठित पद पर आसीन हैं, दूसरों के आपसे दस छोटे-बड़े कार्य सम्पन्न होते हैं, रुपया पैसा या अधिकार आपके पास है, तभी तक प्रशंसक आपके साथ हैं ।

प्रशंसा मनुष्य की कार्यशक्तियों को पंगु कर उसे छोटी सी प्राप्ति में तुष्टि दे देती है । वह सस्ती प्रसिद्धि से सन्तुष्ट होकर मजबूती से आगे नहीं बढ़ता । जो जितना कमजोर उथला होता है वह उतनी ही आसानी से प्रशंसा से विजित हो जाता है । प्रशंसा एक प्रकार का झूठा आवरण है ।

प्रशसा एक झूठा माया जाल है । इसमें फँसकर मनुष्य अपना सही रूप नहीं देख पाता । यह वह शीशा है जिसमें मनुष्य को अपने से बड़ा प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है । वह अपने विषय में बड़े ऊँचे मसूबे बाँधता है । अपने को बड़ा अमीर, बुद्धिमान, वक्ता, विवेकवान या सुन्दर समझता है, जबकि असली बात उल्टी ही होती है । प्रशंसा से सबसे बड़ी हानि वास्तविकता से दूर हट जाना, अपनी असलियत को, कमजोरियों या दुर्बलताओं को भूल जाना है ।

अध्यात्म जगत् में प्रशँसा, मन, आदर की भूख एक

प्रकार का मद है। प्रशंसा करने वालों से प्रेम करना तथा निन्दा करने या आलोचना करने वालों से घृणा या उसका तिरस्कार करना- ये दोनों ही विवेक की सीमा के अतिक्रमण हैं। वास्तविकता इनके मध्य में स्थित है। हमें उचित तो यह है कि प्रशंसा और निन्दा में अपना मानसिक संतुलन बनाये रखें और अपने जीवन को समुन्नत करने, उन्नत बनाने वाले सुझावों को ग्रहण कर लें चाहे वे प्रशंसक से आये अथवा आलोचक से प्राप्त हों।

आध्यात्मिक व्यक्ति न प्रशंसा में भूलता है, न निन्दा में निराश होकर आत्म हत्या करता है। वह अपनी इस कम-जोरी से दूसरों को अनुचित लाभ नहीं उठाने देता। वह अच्छी तरह जानता है कि उथले ओछे व्यक्ति ही प्रशंसकों से घिरे रहते हैं. ऐसे व्यक्ति ही हानि पहुँचाते है। कुछ व्यक्ति प्रशंसा में इतने घिर जाते हैं कि भविष्य में उन्नति नहीं करते। आध्यात्मिक व्यक्ति निरन्तर आगे बढ़ता है। सस्ती प्रसिद्धि से उसे घृणा होती है। वह जो क्षेत्र चुनता है, उसी में अपनी समस्त विद्या-बुद्धि लगाता चलता है। चाहे उसे प्रशंसा की मिठाई प्राप्त न हो वह प्रशंसा से ऊँचा रहता है, उसकी प्रेरणा बाह्य थोथे व्यक्तियों में न होकर अन्तर में होती है। वह अपनी आत्म तुष्टि के हेतु कार्य में संलग्न होता है। गोस्वामी तुलसी दास, भक्ति कवि सूर, राजरानी मीरा, गुरु नानक, सन्त कबीर, महात्मा दादू को कभी यह चिन्ता नहीं रही कि कोई उनकी प्रशंसा करता भी है अथवा नहीं, कोई उनकी रचनायें पढ़ता है या तिरस्कार करता है वे तो निरन्तर अन्तः प्रेरणा से शांति पूर्वक सधैर्य साहित्य साधना करते रहें। हम ऐसे व्यक्तियों को आध्यात्मिक व्यक्ति

कहेंगे, जिन्हे न प्रशंसा की भूख है, न निन्दा से निराश होने की कायरता। प्रशंसा के अभाव में वे कभी विचलित नहीं हुये। मीरा अनेक निन्दाओं के बावजूद दृढ़ता से भक्ति और काव्य जगत् में आगे बढ़ती रही।

—×—

अपनी माता का सम्मान व आदर करो

जिसकी माता जीवित है वह सचमुच बड़ा भाग्यशाली है। क्योंकि जिस दुःख ने प्रेम व हमदर्दी के स्रोत को बहा कर तेरा लालन पालन किया था वह जीते जी सूख नहीं गया है। शास्त्र कहते हैं कि माता का दायत्व (हक) पिता और आचार्य से भी बढ़कर है। यह क्यों? क्योंकि जिसके कारण तेरा आस्तित्व है, बजूद बना है वह माँ का है और माँ ने जिस प्रकार तेरी परवरिश और देखभाल की है वह सर्व श्रेष्ठ निष्काम सेवा थी।

हम जानते हैं किन्तु बुद्धिमान और तजुर्बेकार हैं। अपनी माता से कभी-कभी सम्मति ले लिया कर। यथा संभव कभी-कभी उसके कष्ट सहन का बदला चुकाने का यत्न किया कर। तेरे थोड़े से ही भाव प्रगट करने से उसका दिल बल्लियों उछलने लगेगा। और उसके मन का, आत्मा का, गुप्त आकर्षक आर्शीवाद तुझको खुश और चैन से रहने में जादू का असर दिखावेगा।

उसकी राय का आदर कर यह कभी मत ख्याल कर वह वह बूढ़ी बावली है। तेरे कालिज की शिक्षा, वर्तमान समय का तजुर्वा, यह सब उसके प्रेम के व्यवहार और मभ्यास के आगे तुच्छ और अपूर्ण ठहरेंगे। क्योंकि इसमें असलियत

रहती है और वह ज्यादातर झूंठे हैं, बनावटी हैं।

माता के धार्मिक विश्वास की निन्दा न कर, न उसकी हँसी उड़ा। माना तेरे विचार विशाल है उसकी धर्मनिष्ठा में तंग ख्याली है। पर तू कभी इस खास विषय में उसको दुःखी मत कर।

जब कभी सम्भव हो अपनी युवक मित्र मण्डली और ओर प्यारों को उसके पास लाया कर और अपने सब दुःख-सुख और खेल-कूद के कामों में उसकी सलाह लिया कर जिससे उसको अपने बुढ़ापे में तेरी जवानी की उमंगों का सुख मिल जाया करे। यदि कभी प्रेम के भाव में आकर वह तेरी पीठ पर हाथ फेरे तो खुशी से तू उसके आगे एक छोटे बालक के समान उसकी गोद में खेलता हुआ जान। माता की दृष्टि में एक ज्यादा उम्र के बच्चे के समान है।

यदि तू अभी बालक है तो अपनी पुस्तक कलम बुद्धि का इत्यादि सब उसको दिखलाया कर अपना सबक भी सुनाया कर। इससे उसकी आत्मा को महान सुख मिलता है।

यदि तू युवक हो गया है और माँ बूढ़ी है तो यह कभी न समझ कि वह बेकाम हो गई। अपनी स्त्री और बच्चों को साथ लेकर प्रातः ही सब उसके पैर छुआ कर, उसको प्रणाम किया कर, और जो वह आर्शीवाद दे उसको एक अमूल्य ईश्वर की देन जान। आज के समय में आर्शीवाद के महत्व को न जानने का ही फल ही है जो हमारे दुख और संकटों की मात्रा दिन प्रतिदिन बढ़रही है।

जो युवक इस प्रकार माता का आर्शीवाद लेता रहता है उसकी सब संसारी कामनायें सफल होती है। लोगों की दृष्टि में आदर मान व प्रतिष्ठा प्राप्त करता है और लोक

परलोक के यश का भागी बनता है।

जो लोग माता की ऐसी मान प्रतिष्ठा करते हैं हम उनको आदर की दृष्टि से देखते हैं क्योंकि वह संसार में सबसे अधिक सुखी भाग्यशाली और सबसे अधिक सदाचारी है।

स्त्रियों को शिक्षा चाहे जैसी उच्च कोटि की क्यों न दी जाय। जब तक इनको घरेलू जीवन के इन्तजाम की लियाकत नहीं है। इनकी शिक्षा पूर्ण न होगी न पूर्ण समझी जायगी। माना राज्यकाज के कामों में अधिक उच्चशिक्षा की जरूरत है पर घरेलू कामों के लिये भी यह सब गुण जरूरी हैं जैसे एक सिपाही को उन्नति करते करते एक बड़े अफसर बनने पर उसको निचली सब जगहों का तजुर्बा होता है उसी तरह स्त्रियों को भी हर घरेलू काम में दक्ष होने की जरूरत है। जब ही अपने बावर्चियों, नौकरों और खानसामाओं से काम लेने में सुभीता रह सकता है। अनाड़ियों की भाँति बने रहने से शासन भले प्रकार नहीं कर सकती।

आज समय के समान चाहे, कन्या महाविद्यालय उस समय नहीं थे, पर फिर भी जरूरी शिक्षा खोल कूद में हीं सिखाने का नियम था। जिसको हिन्दू लड़कियाँ गुड्डा-गुड्डी के खोल में घर ही सीख लेती थीं। शादी, बरात, महमान्दारी दहेज, दावत, खाना, पकाना, काढ़ना, सीना-पिरोना, लड़के का जन्म, पूजा, पाठ, मृत्यु में शोक इत्यादि सब कुछ इसी खोल के सिलसिले में जान लेती थीं। और शादी के बाद अपने पति के घर जाती थी, वे ही खोल के अनुभव इनके वहाँ सहायक बनते थे जिसके फलस्वरूप वह अपने व्यवहार से सबको खुश और वश में कर लेती थी। क्या आज भी नई रोशनी के युवक और युवतियां घृणा और दोष दृष्टि से

देखों। पर हम स्पष्ट रूप में बिना कहे भी नहीं रह सकते कि हाल की शिक्षा प्रणाली इस विषय में बुरी तरह से पिछड़ रही है और आगे भी ऐसे ही चिन्ह नजर आते हैं क्योंकि हिन्दूओं में जितना योरप के रहन-सहन का ढांचा बदलता जायगा उसी मात्रा में हमारा हिन्दुत्व जिसमें घरेलू जीवन की सच्ची खुशियां जो केवल हिन्दू घरों की मीरास (उत्तारदयत्व हैं भागती नजर आयेंगी।

शिक्षक हिन्दू समाज अपने बुद्धि विचार पर गर्व करता है। पर वास्तव में देखा जाय तो जाति की रक्षक स्त्रियां जो ऐसी योग्य होती थी कि वह अक्षरों का बोध भी न होते हुये सारे कर्मकाण्ड से इतनी परिचित होती थी कि एक पुस्तक भी क्या बता सकती है।

शास्त्र और पुराणों के उदाहरण उनको अपनी माता, सखी-सहेलियों को संगति से कठाग्र रहते थे। वह साक्षात पुस्तक रूप थीं। वक्त पड़े पर उनकी सम्मति ली जाती थीं। वह जानती थीं किस समय क्या करना चाहिए ? अब हमारे भाव के समझने में कठिनाई न होगी। खेद है! अब यह प्राचीन हिंदू स्त्रियों की नस्ल का खात्मा हो रहा है। हम साहस पूर्वक कह सकते हैं कि जब तक इस नई शिक्षा प्रणाली में प्राचीन सभ्यता के गुणों और नियमों को शामिल न किया जायगा, याद रक्खो हमारी जाति को पछताना पड़ेगा।

धन्यवाद

श्री जमुना प्रसाद जी गुप्ता सुरेन्द्रनगर, ने अपने सुपुत्र श्री दिनेश कुमार (इंजीनियर) के विवाहोत्सव के शुभ अवसर पर "मनुष्य बनो" पत्रिका को ५१/- रु० दान स्वरूप दिये हैं। हम वर-वधू को मालिक से मंगल कामना करते हैं।

सम्पादक

महर्षि शिव

[गताँक पृष्ठ २० से आगे]

उत्तर—जो प्राणी धर्मपरायण नहीं होते हैं वह यमराज मार्ग से अर्थात अपने कल्पित विचारों में रहने के पश्चात विभिन्न योनियों में आते हैं मगर जो धर्मराज के दरबार में पहुंच जाते हैं वह फिर मनुष्य योनि में ही आयेंगे। अन्य योनि नहीं भोगते हैं। अपने संस्कारों को साथ लिये हुये अपने कर्मानुसार मनुष्य योनि में दुख-सुख आदि भोगते हैं।

प्रश्न—धर्मराज से क्या अभिप्राय है?

उत्तर—किसी एक सिद्धान्त का पूर्णतया दृढ़ विश्वासी होना ही धर्म कहलाता है। जब मनुष्य अपनी समस्त कल्पनाओं को किसी एक सिद्धान्त के साथ लगाव कर देता है तो वह सिद्धान्त उसकी समस्त कल्पनाओं को एकाग्र करके एक केन्द्र पर ले आता है। देखा! आप लोग अभ्यास करते हैं। चूंकि आपके अभ्यास का कोई प्रयोजन है और इस प्रयोजन को प्राप्त करने के लिये अनेक बार विभिन्न बातें सोचते हो मगर अन्त में इन कुल वासनाओं या विचारों को जो अपने ध्येय को प्राप्त करने के लिये सोचे थे, ध्येय के पूरा होने पर छोड़ देना पड़ता है अथवा वे छूट जाते हैं। इसी तरह जिस मनुष्य ने किसी भी ध्येय को जीवन में सामने रक्खा उसने उसके प्राप्त करने के लिये जो कुछ अनेक प्रकार के विचार लिये वह सब समाप्त हो जाते हैं। इसी लिये धर्म ही मनुष्य की सहायत करता है और वह नर्क स्वर्ग के चक्र से मनुष्य को निकाल कर एक स्थान पर पहुँचा देता है। इस लिये जिसने जीवन का कोई ध्येय नहीं बनाया और उसकी ऐसे ही गुजरी जिसमें उसकी वृत्तियां उसको विभिन्न प्रकार

के खेलों या कर्मों में फिराती रहीं, वह मरने के पश्चात यमराज के मार्ग से होता हुआ फिर अपने कर्मानुसार विभिन्न योनियां लेता रहेगा और यदि कोई धर्म या ध्येय है तो उस ध्येय को पूर्ण कर लेने के लिए फिर मनुष्य योनि ही मिलेगी।

प्रश्न—गरुड़ पुराण में लिखा है कि मृतक प्राणी धर्मराज के दरबार से होते हुए चार मार्गों से जाते हैं। दक्षिण उत्तर पूर्व पच्छिम। उसका अभिप्राय क्या है ?

उत्तर—मुझे क्या खबर कि गरुड़ पुराण के रचियता ने यह कैसे लिखा है मगर मैं इस वर्तमान समय का आदमी हूँ। साधन किया है और करता हूं। आचार्य वनकर जो अनुभव प्राप्त हुये हैं उनके आधार पर उत्तर देता हूँ।

मनुष्य का आत्मा प्रकाश सरूप है। इसका निश्चय मुझे साधन से हुआ है। मैं साधन में प्रकाश स्वरूप होता रहता हूँ मगर इस प्रकाश रूपी आत्मा पर मन अर्थात विचार के खोल चढ़े हुये होते हैं। जब प्राणी का आत्मा इस खोल को लिये हुये अपने शरीर को त्यागता है वह इस खोल में फिरता है। यदि उसके मन में सांसारिक वस्तुओं के साथ सम्बन्ध है यानी उनकी वासना है तो वह उसका शरीर भारी होगा और वह दक्षिण की ओर यानी नीचे को उतरेगा। यदि उस के विचार प्रेम. प्रीति, भलाई के होंगे तो उसकी वासनायें कम भारी होंगी ओर पूर्व-पश्चिछम की ओर जायेगा। यदि वह निर्वाण आदि का इच्छुक होगा तो बिल्कुल हल्का होने के कारण ऊंचा चढ़कर फिर ठहरेगा। पृथ्वी गोल है और यह हर समय घूमती रहती है। भारी वस्तु सदा आकर्षण शक्ति के नियम के अनुसार नीचे को आती है। हल्की दांये-

[illegible]

बाँये या ऊत्तर को जाती है। फिर अपने-अपने केन्द्र पर बैठ कर वहां अपनी अपनी वासनाओं के अनुसार जो उसके चिदाकाश पर चित्र गुप्त के रूप में मौजूद हैं। वह वहां से फिर विभिन्न योनियाँ लेता है।

मगर जो मरने से पहले अपनी अन्तर प्रकाश और शब्द रूप हो जाता है। इसलिये कोई धर्मराज का दरबार नहीं है क्योंकि धर्मराज मन का ही रूप है। यमराज चित्र गुप्त, धर्मराज यह मन के तीन रूप हैं।

यमराज मन के अनेक प्रकार के ख्यालात, चित्रगुप्त मन के अन्दर दबी हुई वासनाये हैं और धर्मराज मन की एकाग्रता है।

धर्मराज का स्थान

प्रश्न—इस धर्मराज का स्थान कहां है ?

उत्तर—मनुष्य के मन के अन्दर, जो त्रिकुटी का स्थान है जहां ध्यान, ध्येय और ध्यानी तीन अवस्थाओं की एकत्रित अवस्था है वह हमारे अन्दर भी है और बाहर भी है। शरीर के त्याग के पश्चात मनुष्य का सूक्ष्म शरीर अपनी मानसिक या ख्याली दुनियां में चला जाता है। चूंकि उसके जीवन में किसी न किसी प्रकार की इच्छा होती है और प्रत्येक मनुष्य अपने ध्येय का कोई न कोई नाम या रूप बनाता है इसलिये वह रूप रंग उसके सामने आते हैं और हर रूप रंग चूंकि कल्पित होता है समय के पश्चात समाप्त हो जाता है। जब यह समाप्त होता है उसके मन को ठहराव मिल जाता है इस ठहराव का नाम धर्मराज का दरबार है। चूंकि वासनायें गुप्त रूप से उसके अन्दर हैं इसलिये उनके गुप्त चित्र फिर उसको वासनाओं के पूरा करने के लिये दूसरे शरीरों

में जन्म देती हैं।

मैंने गरुड़ पुराण को जीवन में पहली बार सुना था उसका कथन भयानक, रोचक और यथार्थ भी है। सोलहवां स्कन्द यथार्थ है। पहिले कथन रोचक और भयानक है। बहुत कम लोग यथार्थ को समझ सकते है। जो वर्णन शैली प्राचीन ऋषियों ने ग्रहण की। वही संत कबीर आदि संतों ने ग्रहण की। यथार्थ बात में आकर्षण कम होता है उसको केवल शुद्ध बुद्धि वाले मनुष्य समझ सकते हैं।

धर्मराज और त्रिकुटी

प्रश्न—राधास्वामी मत वाले आपके साथ कैसे सहमत होंगे ? वहां त्रिकुटी में लाल रंग का प्रकाश बताते हैं, ओ३म या मृदंग का शब्द सुनाई देता है। कितने ही योजना उसका विस्तार बताते हैं और आप धर्मराज के स्थान को त्रिकुटी का स्थान कहते हैं।

उत्तर—गरुड़ पुराण में भी धर्मराज के दरबार की कई योजन लम्बाई चौड़ाई आदि वर्णन की है। वहां सुनहरे रंग का प्रकाश भी उल्लेख है। लम्बाई का अनुमान जो मुझ अनुमान से है वह सत्य है। वह नाप तोल तो मैंने नहीं की और शायद किसी ने भी न की हो ! मालिक जाने ! यमराज के मार्ग की भी काफी लम्बाई गरुड़ पुराण में वर्णन की है। अनुमान से सत्य मालूम होती है।

अनेक प्रकार के बाजों का उल्लेख है। मेरी समझ में हिन्दू धर्म वालों को अपने शस्त्रों का अमली अनुभव नहीं है और न राधास्वामी मतवालों को अपनी वाणी का अमली

अनुभव है। यह रहस्य केवल गुरु कृपा से ज्ञात होता है। कलियुग में शास्त्र सब के सब कील दिये गये है ऐसा उल्लेख और संत कबीर और राधास्वामी दयाल ने भी भेद को गुप्त रक्खा। संत कबीर का कथन है :=

धर्मदास तोहि लाख दुहाई।
सार भेद बाहर नहिं जाई॥

राधास्वामी दयाल कहते हैं—

संत बिना कोई भेद न जाने,
वह तोहि कहें अलग में॥

परिणाम यह हुआ कि यह संतमत जो सनातन धर्म की एक शाखा है और केवल निवृति मार्ग की शिक्षा देता है। इसके अनुयायियों में भी भिन्नता हो गई और हम सब के सब आपस में बट गये। मैंने जगत कल्याण के ख्याल से बात को स्पष्ट कर दिया और वाणी जाल से आप तो निकल गया हूं दूसरों को निकालने का साहस कर रहा हूं।

धर्मराज का दरबार-फिर जन्म

प्रश्न—अच्छा! गरुड़ पुराण में लिखा है कि धर्मराज के दरबार से प्राणी वापिस आकर जन्म लेते हैं। वह वापिस आकर कसे विभिन्न योनियों में आते है?

उत्तर—सूक्ष्म शरीर क्या है? वासनाओं का केन्द्र है। यह अपने लम्बे स्वप्न के जीवन को भोगता हुआ स्थिर हो जाता है। उसका स्वप्न यमराज है, ठहराव धर्मराज है और वासनायें जो गुप्त हैं वह चित्र गुप्त का स्थान है। ठहराव के पश्चात फिर अपनी वासनाओं का कारण आकाश मण्डल में घूमता रहता है और यह वासना रूपी आत्मा अनुकूल

विचार या वासना वाले स्त्री पुरुष के दिमाग के साथ मिल कर उनके रक्त और वीर्य में आ जाता है और बच्चे के रूप में पैदा होता है और अपने कर्म का सिलसिला जारी रखता है। यही बात गरुड़ पुराण में है और यही बात सावन मास के व अन्य शब्दों में है जो सारवचन, गद्य पद्य में मौजूद है। वासनारूपी सूक्ष्म शरीर चुम्बक के नियम के अनुसार पुरुष व स्त्री के दिमाग में असर करती है।

८४ के चक्र से छुटकारा

प्रश्न—उसको ८४ के चक्र से छुटकारा कब मिलता है ?

उत्तर—जब तक यह प्रकाश और शब्द रूप न हो जाय, आवागमन का चक्र कभी समाप्त न होगा। उसका इलाज गरुड़ पुराण में गायत्री का अजपा जाप और गुरु स्वरुप का का ध्यान है। यही बात राधास्वामी मत या सँत मत में है। यहाँ अजपा जाप और गुरु स्वरूप का ध्यान है। इसके बाद प्रकाश का मार्ग है। गरुड़ पुराण की गायत्री क्या है ?

ओ३म् भू भुर्वः स्वः महः जनः तपः सत्यम्।
तत्सवितुरवरेण्यम भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः
प्रचोदयात् ॥

अर्थात इन श्रेणियों से आगे जो सावित्री रूपी प्रकाश है उसके दर्शन करो जो तुम्हारी बुद्धि का प्रेरक हो। यही बात राधास्वामी मत में है कि सहसदल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महा सुन्न, भंवर गुफा से आगे सतलोक जो शब्द और प्रकाश का भण्डार है या मण्डल है उसमें चलो। तब तुम्हारा आवागमन समाप्त होगा।

प्रश्न – गुरु का ध्यान तो मानसिक ही होगा ?

उत्तर—हाँ, मगर गरुड़ पुराण या हिंदू शास्त्रों में कहा है :—

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देव महेश्वरः ।
गुरु साक्षात परब्रह्म तस्मै श्री गुरवेनमः ।।

और सँत मत में भी—

गूरु को मानस जानते, ते नर कहिये अंध ।
दुखी होंय संसार में, आगे जम का फंद ।।

जो यह समझते हैं कि गुरु फकीरचन्द पुत्र मस्तराम है या कोई और मनुष्य है वह इस शरीर के फंदे से अर्थात मन के चक्र से नहीं निकल सकते ।

गुरु किया है देह को, सतगुरु चीन्हा नाहिं ।
कहें कबीर ता दास को, तीन ताप भरमाहिं ।।

प्रश्न—ऐसा तो कोई भी नहीं समझता होगा । न हिंदू लोग, न सँत मत वाले ।

उत्तर—तो इन दोनों में से कोई भी आवागमन से बच नहीं सकता है गरुड़ पुराण में स्पष्ट लिखा है कि पारब्रह्म से आगे शब्द ब्रह्म है और सँत मत में शब्द अनहद को सतगुरु माना गया हैं ।

शब्द गुरु को कीजिये, बहुते गुरु लवार ।
अपने अपने स्वाद को, ठौर ठौर बटमार ।।

प्रश्न—तो शब्द गुरु और शब्द ब्रह्म एक ही वस्तु हुई ?

उत्तर—हाँ, इसलिये मैंने इस सत्संग में यह कहा था कि सनातन धर्म और सँत मत एक ही बात है ।

तत्व ज्ञान यही है कि मनुष्य शब्द ब्रह्म या शब्द योग का साधन करे और अपने आवागमन को समाप्त करे ।

क्रिया कर्म

प्रश्न—जिनको तत्व ज्ञान न हुआ हो क्या उनकी क्रिया कर्म अनिवार्य है ?

उत्तर—हाँ, अनिवार्य है। जितने भी यह संस्कार हैं सबके सब प्राकृतिक हैं। कोई किसी तरीके से करता है, कोई किसी तरीके से। मित्रों ! जीवन इसी खब्त में व्यतीत हुआ। मौज मुझे सतपद की खोज के सिलसिले में दाता-दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी के चरणों में लाई थी। उनके संस्कारों के प्रभाव से मैं यह काम आज २५ वर्ष से कर रहा हूँ। इस काम से मुझे स्वयं अपने का लाभ पहुँचा। स्त्री गुजरी और मैं यह समझता हूँ कि यह मौज ने मेरी बहतरी के लिये ही किया। शेष जीवन में और साधन और अभ्यास करूँगा। अब कोई भी जिम्मेदारी नहीं रही। बड़ी लड़की को मेरा लड़का अपने साथ ले जायेगा। मैं अकेला हो गया। मुझे किसी बात का दावा नही है। जीवन का अनुभव है। जो भी जीवन शेष है, जगत के कल्याण के लिये काम करूँगा। यदि कोई और प्रश्न आप लोगों को पूछना हो तो पूछ सकते हैं। अपने निज अनुभव के आधार पर उत्तर दूँगा।

प्रश्न- गरुड़ पुराण में तो बहुत विस्तार से काम लिया गया है। आपने संक्षिप्त रूप से काम लिया है।

उत्तर-- वह कृत्य को जो विधि वर्णन करता है वह लम्बी है। मैंने कृत्य को छोड़ दिया। यह परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है मगर तत्व बात सदा स्थित रहती है।

आवागमन है और यह तब टूटेगा, जब मनुष्य का सूक्ष्म शरीर टूटेगा। जब तक सूक्ष्म शरीर कायम है तब तक

आवागवन विभिन्न लोक लोकान्तरों में होता ही रहता है।

प्रश्न- गरुड़ पुराण में जहाँ जाकर आवागवन का चक्र समाप्त होता है। वह शब्द ब्रह्म का स्थान है। तो संत मत के सिद्धान्त के अनुसार यह आवागवन का चक्र कहाँ समाप्त होता है ?

उत्तर- देखो मित्रो ! मेरा ज्ञान पुस्तकीय नहीं है मैंने साधन किया है और करता रहता हूँ। साधन से और गुरु बनकर जो अनुभव प्राप्त हुये हैं उनसे सिद्ध होता है कि जब मैं शारीरिक मानसिक मान बोध भूल जाता हूँ तो प्रकाश और शब्द रूप हो जाता हूँ। वहाँ—

न कोई तरवैय्युल ही रहा, न कोई रूप न रेखा।
जो कुछ भी रहा शब्द, रहा या प्रकाश सरूपा।,
इस प्रकाश में नानाविधि की, शक्लें हैं बनती।
जोकि जिन्दगी में कभी, कभी थी मैंने देखी।।

कभी-२ अशब्द व अप्रकाश पने की अवस्था आती रहती है। वहाँ न मैं, न तू। चिराग गुल पगड़ी गायब। उसके प्रमाण में दाता दयाल का शब्द है।

गुरु करो अपने आपको, अपना पता मिले।
उसको कीजो सैर हो आवे बका मिले।।
बेखुद बनो खुदी को करो दिल में महवगर।
अपना ही जात पाक में, जाते खुदा मिले।।
बेअक्ली व अक्ल के धन्धों से ही निजात।
उस वक्त जिन्दगी का भी, तुमको मजा मिले।।

देखो मित्रो ! मैंने जीवन भर साधन, योग कर्म और भक्ति का सौदा किया है। सुरत शब्द का परिणाम बता

दिया कि मेरी सुरत साधन करती हुई अशब्द और अप्रकाश गति में चली जाती है। केवल इस साधन से भी आवागवन नहीं छूटता।

प्रश्न- क्यों ?

उत्तर- साधन के समय आनन्द अवश्य मिलता है और फिर शारीरिकपने, मानसिकपने और आत्मिक अवस्था के भानबोध अप्रकाश और अशब्द गति में जाने के बाद समाप्त हो जाते हैं मगर फिर उत्थान होता है तो शारीरिक, मानसिक और आत्मिक भान बोध होता है। फिर सुरत इस भान बोध को देख कर समय समय पर इन भान बोध से आकर्षित होती है और फँस जाती है। इसलिये केवल शब्द अभ्यास ही आवागवन से छुटकारा दिलाने वाला नहीं हो सकता इसके साथ सतपुरुषों का सत्संग जो स्वयं निर्बन्ध हों अनिवार्य है।

मेरे मन में प्रेम, भक्ति, योग के संस्कार प्रबल थे दातादयाल ने दया करके आचार्य पदवी दे दी। सत्संगियों के तजुर्बों ने सिद्ध किया कि यह सब प्रेम भक्ति, योग विचार इस सूक्ष्म प्रकृति के खेल हैं। अर्थात मन के खेल है और यही मन का खोल माया कहलाती है। जब तक मनुष्य को पूर्ण ज्ञान नहीं होता है यह सत् चित आनन्द सब प्राकृतिक हैं। आवागमन से दायमी (स्थायी) मुक्ति असम्भव है। यही बात गरुड़ पुराण में है। राधास्वामी मत में भी मुक्ति का यही रहस्य है। शब्द है :—

बंझा ने बालक जाया। जिन सकल जीव भरमाया॥
अजानी नाम कहाया। जन माया सबल उपाया॥
आदि आदि। यदि पूरा पढ़ना हो तो 'सार बचन' पद्य

से पढ़ लो। इस शब्द की आगे और कड़ी हैं :-

करमी विषयी और उपासक,
इन सब चक्कर खाया।
काल जाल से कोई न बाचा
निज घर अपने कोई न आया।
तब सतपुरुष दया चित आई,
कलि में संत रूप धर आया।
सब जीवन को दिया संदेशा,
सत्त लोक का पता बताया॥

यही बात गरुड़ पुराण में है कि आवागमन से रिहाई न वेद पाठियों की, न व्रत रखने वालों की, न किसी और ढंग से होती है। केवल गायत्री के अजपा जाप, गुरु मूर्ति के ध्यान और पारब्रह्म और शब्द ब्रह्म की प्राप्ति से होती है।

दाता दयाल का साहित्य इस विषय पर बहुत ही उत्तम और व्याख्या सहित है।

राधास्वामी पँथ और निवृति मार्ग

प्रश्न—एक सनातन धर्मी। जब यही बात है तो फिर राधास्वामी नाम की क्या आवश्यकता थी? इस पँथ को नया नाम क्यों दिया गया?

उत्तर—यद्यपि इस श्रुति मार्ग या अनहद मार्ग का वर्णन उपनिषद आदि में है और शब्द ब्रह्म का संकेत गरुड़ पुराण में भी है मगर आप लोग कितने हैं कि जो इस मार्ग पर चलते हैं। इसलिये कलियुग में जीवों के कल्याण के लिये—

सतयुग त्रेता द्वापर बीता।
काहुन जानी शब्द को रीता॥

कलियुग में स्वामी दया विचारी ।
प्रगट करके शब्द पुकारी ।।
जीव काज स्वामी जग में आये ।
भवसागर से पार लगाये ।।
तीन छोड़ चौथा पद दीना ।
सत्तनाम सतगुरु गति चीन्हा ।।

जीवों का असली कल्याण प्रवृति मार्ग में नहीं है। यहाँ सब लोग किसी न किसी रूप में द्वन्द की रचना के कारण दुखी हैं। सन्तमत केवल निवृति मार्ग अर्थात भवसागर से पार कराने का भेद देता है। यही बात गरुड़ पुराण में है कि प्रत्येक व्यक्ति को धर्मराज का दरबार लाजिमी है और आवागमन लाजिमी है। यह संस्कार जो दिये जाते हैं केवल प्रवृति मार्ग को श्रेष्ठ मानने के लिये हैं।

प्रश्न—क्या निवृति मार्ग का संस्कार नहीं है ?

उत्तर--वह भी है मगर यह केवल गायत्री प्राणायाम मन्त्र है। और सन्त मत में संक्षेप करके सतनाम या पंच नाम या राधास्वामी नाम का संस्कार है।

प्रश्न--राधास्वामी नाम का क्या अर्थ है ?

उत्तर-राधा आदि सुरत का नाम।
स्वामी आदि शब्द पहिचान ।।

गरुड़ पुराण में शब्द ब्रह्म का उल्लेख है। यह झगड़े सब शब्दों के है। यह राधास्वामी नाम वास्तव में धुनात्मक है जो हमारे असली तत्व की गति की आवाज (शब्द) है। आवाजें तो अनेक हैं मगर वह स्थूल, सूक्ष्म और कारण प्रकृति की गति का परिणाम होती है। इसी अन्तरीय धुनात्मक नाम के सुनने से मनुष्य की तवज्जह (सुरत) थिर हो

जाती है। तब उसको असली, सच्चा और पूर्ण ज्ञान होता है।

प्रश्न--(वही सनातन धर्मी)इसके अधिकारी कहाँ हैं ? इस समय राधास्वामी मत में लाखों आदमी शामिल हैं। क्या वह सब अन्तरीय धुनात्मक नाम को सुनते हैं ?

उत्तर- आपने पक्ष और कटाक्ष की बात की है। क्या सब सनातन धर्म वालों की एक श्रेणी है ? नहीं है। बीज डाला गया है। संस्कार किसी न किसी जन्म में अपना काम करेगा।

प्रश्न--आपकी इस बात से तो मैं वह समझता हूँ कि आप सनातन धर्म के अनुयायी हैं।

उत्तर--सनातन कहते हैं सबसे पुराने या आदि को। हम सबके सब मनुष्य ही हैं और हम सब का मार्ग एक ही है मगर श्रेणिया हैं। मैंने इसलिये शब्द 'मानवता' का प्रयोग किया है। हिंदू, मुसलमान, सिख, ईसाई सबके सब मनुष्य हैं। हम सबका मार्ग प्राकृतिक है। हम अपने अज्ञान और भ्रमवश भेदभाव बना बैठे हैं।

प्रश्न-ऐसा क्यों ?

उत्तर--गुरु नहीं मिला। कोई सच्ची बात बताने वाला नहीं मिला। यदि कहीं कोई है भी तो जनसाधारण परवाह नहीं करते हैं। आप भी मेरी स्त्री के मरने पर मातमपुर्सी के ख्याल से आ गये और आपने मेरा पिछला सत्संग जो गरुड़ पुराण के आधार पर हुआ था, सुना। चूंकि वह अच्छा लगा, आप कई ब्राह्मण सज्जन आ गये हैं।

प्रश्नकर्ता--बात ठीक है। हम आपके राधास्वामी मत से स्वाभाविक दूर रहना चाहते हैं मगर यदि यही राधास्वामी

मत है तो हम हर्ष पूर्वक इन विचारों को स्वीकार करते हैं। आपने लौकिक व्यवहार को नहीं छोड़ा है।

उत्तर–देखो ! मैं स्वयं तो राधास्वामी मत में नहीं आया था। मुझे उस मालिक परम तत्व, राम या कोई और नाम रक्खो, के मिलने और आवागवन से बचने की लालसा थी। वर्षो रोने धोने के बाद मेरा एक स्वप्न था जो मुझको दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज के चरणों में ले गया था। वहाँ से मेरे भाग्य में यह राधास्वामी मत आया। चूंकि इस मार्ग में निवृत मार्ग के ख्याल से सबका खण्डन है मैंने प्रण किया था कि इस लाइन पर सच्चा होकर चलूंगा और जो मिलेगा सबको बता जाऊँगा।

चूंकि वही खण्डन गरुड़ पुराण में १६वें स्कन्ध में मौजूद है यद्यपि वर्णनशैली का अन्तर है, इसलिये मेरी तमाम शंकायें समाप्त हो गई और मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि निबृति मार्ग के लिये यह खण्डन अपने आप हो जाता है। हां, प्रबृति मार्ग के लिये निचली श्रेणियों में साधन विश्वास आदि आवश्यक है।

प्रश्न- वह कैसे ?

उत्तर- सहसदल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न भंवर, गुफा आदि का साधन अथवा भूर्भुवःस्वः तहः जन तपः लोक का साधन मानसिक जगत में सुखदायी और लाभदायक होता है।

निर्वाण

प्रश्न- वह कौन ?

उत्तर- यह गरुड़ पुराण का विषय है। मेरी उन्नति मार्ग 'मानवधर्म प्रकाश' पुस्तकों का अध्ययन करो। सन्त मत में

५ नाम का साधना भी मानसिक जगत की उन्नति का का करता है। इन स्थानों पर साधन करने से मनानन्द, योगानन्द, विवेकानन्द, ज्ञानानन्द आदि मिलते हैं। निर्वाण य अपने घर दायमी वास के लिये निज नाम, या राधास्वामी नाम आदि का साधन और किसी पूर्ण पुरुष, वीतरागपुरुष या परमसन्त का सत्संग अनिवार्य है।

प्रश्न- सत्गुरु, पूर्ण पुरुष या वीतरागतुरुष कि जाति का होना चाहिये ?

उत्तर- गरुड़ पुराण में लिखा है कि यह गरुड़ पुराण सूत जी ने ऋषियों को सुनाया था। और विष्णु भगवान ने गरुड़ से कहा था। मगर सूतजी कौन थे ? यह स्वयं इतिहास से समझ लो। यहाँ जाति पाँति का सवाल नही है। सब मनुष्य एक हैं। जो शब्द और प्रकाश स्वरूप हो गया और यदि वह सत्सग का सिलसिला चालू करता है तो वह भी पूर्ण पुरुष, वीतराग पुरुष हो सकता है।

प्रश्न- यह ठीक है कि सूत जी उच्च जाति या कुल के नहीं थे मगर वाणी तो विष्णु भगवान ने गरुड़ पुराण को कही थी।

उत्तर- उसका लिखने वाला कोई महान पुरुष है। सम्भव है वेदव्यास जी हों, जिन्होंने विष्णु भगवान का नाम रखकर वाणी कही हो क्योंकि गरुड़ पुराण में अजामिल आदि का उल्लेख आता है। इससे सिद्ध हुआ कि यह किसी संत का लिखा हुआ है। विष्णु और गरुड़ का एक नाम है। पुराण अलंकार और कथा के रूप में असलियत और सतपद के प्राकटय के रूप हैं। जिस समय यह लिखे गये होंगे उस समय ऐसी ही वर्णशैली होगी। दाता दयाल ने पुराणों की

ा की है और साथ ही सोसाइटी को कायम रखने रहा होगा ताकि सामान्य जनता एक जंजीर में रहे ाजिक प्रबन्ध न बिगड़े ।

- आवागमन कब मिटेगा ?

र- जब मानव जीवन शब्द ब्रह्म के सोक में चला या शब्द रूप हो जायेगा । जब तक ऐसा नहीं होता विभिन्न अवस्थाओं में फिरता रहेगा । उस समय तक र अनिवार्य है । इनके बिना गुजारा नहीं होता है ।

श्न- वह विभिन्न अवस्थायें क्या हैं ?

उत्तर- योग की श्रेणियाँ पिंड व अंड देश । गरुड़ पुराण इसका वर्णन आया है । मगर वहाँ संकेत मात्र है ! राधा-ामी मत में इनकी पूर्ण व्याख्या है । यद्यपि वह भी अब र्तमान समय की बुद्धि वाद के लिये सन्तुष्टि देने वाली नहीं इसलिये उनको साइन्टिफिक ढंग से अक्टूबर ६२ ई० के मनुष्य बनो' में स्पष्ट कर दिया है ।

चूंकि गुरु ऋण था और मेरा यह सन् १९०५ ई० का ण था कि जो कुछ मेरी समझ में आयेगा वर्णन कर जाऊँगा ौर इस प्रण का असली कारण यह खण्डन था जो राधा-वामी मत व कबीर मत में किया है । इसलिये मैंने यह ाम किया । यह मौज होगी और क्या कहूं ! मेरा विचार न सब प्रश्नोत्तरों को प्रकाशित करने का है । वह सज्जन हने लगे कि हमें तो बड़ी प्रसन्नता होगी । यहाँ तक कि मने एक दो समाचार पत्रों में भी आपके गरुड़ पुराण पर काश डालने का जिक्र किया है मगर एक बात का उत्तर ।

गुरु की मुख्यता

प्रश्न- यह कि आप ईश्वर, परमेश्वर, ब्रह्म, पारब्रह्म का इष्ट नहीं रखते किन्तु केवल गुरु को ही मानते हैं ?

मित्रो ! अब ज्ञात होता है कि ईश्वर, परमेश्वर, ब्रह्म, पारब्रह्म, शब्द ब्रह्म यह तो मुझमें पहिले भी थे और मैं इनसे ही निकला था। मुझे पता न था। दाता दयाल ने दया करके अज्ञान भ्रम का पर्दा दूर कर दिया। अब चेतन्यता की दशा में सिवाय गुरु के किसका अहसान मानूं। आप ही सोचो !

बन्दनम् सत ज्ञान दाता, बन्दनम् सत ज्ञान मय।
बन्दनम् निर्वाण दाता, बन्दनम् निर्वाण मय॥
भक्ति मुक्ति योग मुक्ति, आपके आधीन सब।
आप ही हैं सिध, सद्गति, जीव जन्तु मीत सब॥
आप गुरु सतगुरु दया, और प्रेम के भण्डार हैं।
आप कर्ता धर्ता हैं, करतार जगदाधार हैं॥
ऋद्धि सिद्ध शक्ति नौनिधि, हैं चरण में आपके।
बच गया भव दुख से जो, आया शरन में आपके॥
भक्ति दीजै नाम की, सतनाम में विश्राम दे।
राधास्वामी अपना कीजै, राधास्वामी धाम दे॥

इसलिये इस मानवता मन्दिर में दाता दयाल (महर्षि शिव) का और समस्त सतगुरुषों का, जिन्होंने संसार में जीवों के कल्याण के लिये और अज्ञान भ्रम मिटाने के लिये काम किया है साहित्य व महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज का स्टेचू रख रहा हूँ।

॥ द्वितीय भाग समाप्त ॥

—०—

गरुड़ पुराण रहस्य

तृतीय भाग

प्रथम सत्संग [हनम कुण्डा १६. १. ६४]

नोट- इस पुस्तक के द्वितीय भाग में परम संत दयाल फकीर साहब ने गरुड़ पुराण के रहस्यों को प्रश्न व उत्तर के रूप में संक्षेप में वर्णन किया है, मगर इस तृतीय भाग में गरुड़ पुराण के रहस्यों की बहुत कुछ व्याख्या की गई है और उनको राधास्वामी दयाल व कबीर साहब की वाणियों के आधार पर तथा वैज्ञानिक ढंग पर समझाया गया है ताकि संत मत और सनातन धर्म वाले तथा शिक्षित वर्ग संत मत और गरुड़ पुराण की शिक्षा को समझ सकें और यह जान सकें कि दोनों की शिक्षा एक ही है और इस प्रकार अस लयत को समझ कर पारस्परिक धार्मिक और सम्प्रदाय भेदभाव व पक्षपात को मिटा सकें ।

(देवीचरन मीतल स० सम्पादक)

सत्संग

मैं यहां दस साल से आ रहा हूँ । आज दाता दयाल के स्टेचू को देखा । ख्याल हुआ कि मैं इनके दरबार में क्यों गया । मुझे अपना बचपन याद आता है जब मालिक या परम तत्व से मिलने की तड़प मे रोया करता था । उस समय मेरा स्वप्न था जो मुझे दाता दयाल (महर्षि शिव) के चरणों में ले गया । उन्होंने मुझे राधास्वामी मत की शिक्षा दी। चूंकि स्वामी जी की वाणी (माया सम्वाद) में सब मत

और सम्प्रदायों का खण्डन था अतः जीवन में देखना चाहा था कि राधास्वामी दयाल या कबीर ने जो कुछ कहा हैं उस में कहाँ तक सच्चाई है। यह या तो मौज होगी या प्रालब्ध कर्म होंगे। इसका फैसला नहीं दे सकता।

मैं बचपन से ही इस लाइन पर चला हूँ। बड़ा साधन और अभ्यास किया है और सच्चे शिष्य और सच्चे गुरु की हैसियत से जो अनुभव किये हैं वह कहता रहता हूँ और कहता हूँ।

सवा महीने हुआ मेरी स्त्री परलोक सिधार गई, ब्राह्मण कुल के नाते मेरे परिवारीजनों के कहने पर गरुड़ पुराण की कथा रखवाई। मैंने इस कथा को जीवन में पहली बार सुना था। गरुड़ पुराण की कथा मरने पर रखी जाती है उसे उस समय क्यों रखते है इसका कारण है।

गरुड पुराण सुनाने का समय

देखो! जीवों की दुनिया में इतना आकर्षण है कि सच्चाई या सार तत्व को सुनने को उनके पास समय नहीं है और रुचि नहीं है। गरुड़ पुराण में पूर्ण ज्ञान भरा है जो राधास्वामी मत की शिक्षा है वही उसमें है। गरुड़ पुराण सुनाने का समय ऋषियों ने मनुष्य की मृत्यु के बाद रखा है क्यों कि मरने वाले के घर के तथा बाहर से आने वालों के दिलों पर एक प्रकार का प्रभाव दुनियाँ की तुच्छता होने का होता है। इसलिये यह कथा उस समय ही उपयुक्त समझी गई ताकि गरुड़ पुराण को सुनकर दुनियाँ से वैराग हो जाय। जब तक संसार से मनुष्य को उपरामता नहीं आती कोई व्यक्ति राधा

स्वामी मत या संत मत का अधिकारी नहीं होता है। संत मत की भी शिक्षा उनको है :-

विषयन से जो होय उदासा।
परमारथ की जा मन आसा ।।
धन सतान प्रीति नहीं जाके।
खोजत फिरे सन्त गुरु ताके ।।

लाखों लोग राधास्वामी मत में है मगर क्या वह इस शिक्षा के अधिकारी हैं ? नहीं। मैंने गरुड़ पुराण सुना। उस में वर्णन है कि जीव कहाँ से आता है और कहां जाता है, किन किन अवस्थाओं में होकर उसे गुजरना पड़ता है, आदि आदि। इस सम्बन्ध में कबीर का कथन है :-

उतते कोई न आइया, जासे पूंछू जाय।
इतते सब कोई जात हैं भार लदाय लदाय ।।
उतते सतगुरु आइया, बुधि मति जाकी घोर।
भवसागर के जीव को, काढ़ि लगायो तीर ।।

सतगुरु

जीव कहाँ से आता है और कहाँ को जाता है इस विषय को यथार्थ रूप से केवल सतगुरु हृदयांकित करा सकता है। वह सतगुरु वह है जिसे सच्चाज्ञान और अनुभव हो अर्थात त्रिलोकी के अथवा तीनों प्रकार के शरीरों के परे का जिसे अनुभव हो।

हमारे तीन शरीर हैं :- स्थूल, सूक्ष्म, कारण। इनसे परे वह परम तत्व है जो इन तीनों में रहता है। स्थूल शरीर हमारा देह है। सूक्ष्म शरीर हमारा मन है। यह संकल्प का या वसना का केन्द्र है। कारण शरीर शब्द और प्रकाश है

वह आत्म स्वरूप है। जो वस्तु इनमें रहती है और इन साक्षी है वह हम हैं। वह परम तत्व है। सन्त उसे सुरत कहते हैं। जब तक कोई मनुष्य शरीर म रहता हुआ शब्द और प्रकाश का अनुभव करता हुआ परे नहीं जाता, उसको त्रिलोकी का ज्ञान नहीं हो सकता।

लोग पुस्तकें पढ़ लेते हैं। किसी ने कोई ग्रन्थ पढ़ लिया। उसका या गीता या भागवत या रामायण का प्रमाण दे दिया इसी को सब कुछ समझ बैठते हैं। उनमें अपनी गाँठ का कुछ नहीं होता। मैंने जीवन भर सफर किया है। साधन अभ्यास किये हैं और अब भी करता हूँ। मैं जो कहता हूं अपना अनुभव कहता हूँ। यह नहीं कहता कि जो मैं कहता हूँ वह ठीक ही है।

मैं अपनी नीयत से सचवाई से चला हूँ और जिस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ वह कह रहा हूँ।

गरुड पुराण और राधास्वामी व सॅत मत

गरुड़ पुराण में लिखा हुआ है कि मरने वालों को यमराज पड़कते हैं, वैतरणी नदी में ले जाते हैं फिर धर्मराज के यहाँ, फिर चित्र गुप्त के यहाँ जाता है। मैं मानता हूँ कि यह ठीक हैं। इसका प्रमाण भी आगे चलकर दूंगा। राधास्वामी दयाल ने भी अपनी वाणी में ऐसा ही कहा है मगर राधास्वामी मत वालों को इतना अनुभव ज्ञान नहीं है। वे एक दो पुस्तक पढ़कर दूसरों के धर्मों का खण्डन गलत रूप से करते है। राधास्वामी दयाल ने बारहमासा के सावन मास में लिखा है—

सावन आया मास दूसरा।
सास मरी घर आया सुसरा॥

काली घटा श्याम मन हूआ ।
श्याम कंज में यह मन मूआ ।।
गरजे बादल चमके बिजली ।
मनसा मोड़ी आसा बदली ।।
सुरत निरत की झड़ियाँ लागी ।
धुन अनंत शब्दन से चाली ।।
वृद्ध अवस्था चेतन लागी ।
काल आया जब सिर पर गाजी ।।
यमपुर से अब सतगुरु राखें ।
बहुतक जीव मौत दर ताकें ।।

इस शब्द से प्रगट है कि स्वामी जी मानते हैं कि यमपुर है और गरुड़ पुराण भी यही मानता है । फिर दोनों में क्या अन्तर है ? कुछ नहीं ।

इसी प्रकार गरुड़ पुराण में अनेक बातों का जैसे नर्क स्वर्ग यमराज, धर्मराज, वैतरणी चित्रगुप्त आदि आदि का वर्णन आया है । इन सब बातों का स्पष्टोकरण सन्त मत तथा विज्ञान की दृष्टि से आगे किया जायेगा ताकि यह समझ में आजाय कि गरुड़ पुराण की शिक्षा और सन्त मत की शिक्षा में कोई भेद नहीं है । हाँ, वणन शैली भिन्न भिन्न हैं ।

यमराज (मृत्यु के बाद की अवस्था)

देखो ! यह प्रतिदिन के व्यवहार में देखते हो कि जब जाग्रत अवस्था मैं होते हो काम करते रहते हो । जब सोने लगते हो तब मन अनेक प्रकार के स्वप्न देखता है । कोई अच्छे स्वप्न देखता हो कोई बुरे और भयावने । कोई साँप, बिच्छू, शेर, भेड़िया आदि देखता है कोई बड़बड़ाता है, कोई

गन्दी नालियों में गिरता पड़ता है और कोई अनेक प्रकार यातनायें भोगता है। कहने का अभिप्राय यह है कि मन पर जैसे- जैसे संस्कार पड़े होते हैं चाहे वह प्रालब्ध कर्मों के अनुसार हों अथवा बाह्य जगत में देखने, सुनने और कर्मों के कारण हों। इन सबकी फिल्म दिमाग पर पड़ती रहती है और मन तरह तरह के संकल्प विकल्प उठाता रहता है। स्वप्न अवस्था में वह फिल्म चलती रहती है। जो दशा स्वप्न में होती है वही साधन में होती है। साधन में जो मन के ख्यालात होते हैं वह फिल्म बनकर सामने आते रहते हैं। बैठे अभ्यास करने और मन ले गया कहीं का कहीं। उस मन का या मन की उस अवस्था का नाम है यमराज। जो स्वप्न अवस्था में साधन में होती है। मृत्यु के पश्चात जो अवस्था होती है वह साधारणतया एक लम्बा स्वप्न होता है और हमारा प्रतिदिन का स्वप्न थोड़े समय का होता है।

यमराज या उस अवस्था से छुटकारा

इस यमराज से कौन रक्षा कर सकता है। राधास्वामी मत में कहा गया है कि यमपुर से गुरु रक्षा कर सकता है। गुरु कैसे रक्षा करेंगे ? वह तुमको गुरु बतायेगा अथवा नाम का अजपा जाप और गुरु मूर्ति का ध्यान बतायेगा। हिंदू शास्त्रों में गायत्री मंत्र का अजपा जाप और गुरु मूर्ति का ध्यान बताया गया है। इन दोनों में कोई अन्तर नहीं है। असलियत का ज्ञान न होने से भेद-भाव हो गया है।

अभी मैंने बताया कि यमपुर से गुरु रक्षा कर सकता है और वह तुमको गुरु बता देगा। उस गुरु के अनुसार चलना आपका काम है। इसलिये बड़े आग्रह के साथ कहता हूं कि

मेरा बात को एकाग्रचित होकर सुनो ।

आप लोग या दुनियां चाहे मुझे अहंकारी कहे मगर मैं विश्वास दिलाता हूँ कि कुदरत ने मुझे विशेष मिशन के लिये भेजा है। मेरा मिशन है कालमाया से निकाल कर सत पद पर पहुंचाना वशर्ते कि किसी को जिज्ञासा हो या उत्कट इच्छा हो तुम कहोगे कि मैं गलत कह रहा हूं। सुनो दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जिनको मैं ज्ञान का अवतार मानता हूँ उन्होंने मेरे लिये क्या लिखा है—

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेषा ।
दुखी जीव को अंग लगाकर, लेजा गुरु के देशा ।
तीन ताप से जीव दुखी है, निर्बल अबल अज्ञानी ।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी ॥

इस शब्द की अन्तिम कड़ी में मुझे दया करने को कहा गया है। वह मैं कर रहा हूँ। वह कैसे ! वह इस तरह पर कि मैं किसी से कुछ न लेकर जीवन की सफलता का आवागवन से बचने का यमपुर आदि के कष्टों से बचने का गुरु या उपाय बता रहा हूं।

एक समय की बात है जब मैं सूनाम में स्टेशन मास्टर था। दाता दयाल (महर्षि शिव) वहाँ पधारे। वहाँ एक लखपति सज्जन थे। उन्होंने मुझसे कहा कि दाता दयाल उनके यहां खाना खायेंगे। जब उनसे कहा गया तो बोले फकीर ! क्या तेरे घर में मेरे लिये टुकड़ा नहीं रहा ! उन सज्जन से कहा कि तुम अमीर और मैं फकीर ! मेरा तुम्हारा क्या सम्बन्ध ! उनके कहने का अभिप्राय यह था कि मेरे पास जिज्ञासु आयें। सन्त मार्ग जिज्ञासुओं को है इसलिये मैं भी

कहता हूँ कि मेरे पास सच्चाई के जिज्ञासु आयें या वे आवें जो ८४ के चक्र और आवागमन से बचना चाहते हैं। उनको चाहिये कि वे गुरु सेवा करें। बिना सेवा के किसी को कुछ नहीं मिलता फिर गुरु सेवा क्या है ?

गुरु सेवा और गुरु

दर्शन करे वचन पुनि सुने।
सुन-सुन कर निज मन में गुने।
गुन गुन काढ़ि लये तिस सारा।
काढ़ि सार तब करे अहारा।
करि अहार पुष्टि हुआ भाई।
भव भय भौ सब गय नसाई।।

यह है गुरु सेवा। यदि धन देने वाले परमात्मा को पा सकते तो इस दौलत को पा जाते और निर्धन उससे बंचित रह जाते। मगर यह तो सुरत (तवज्जह) देने का विषय है बचन सुनने और उनके गुनने, मनन करने से जैसा कि वाणी में ऊपर कहा है तुम्हारा बेड़ा पार होगा। केवल गुरु २ या राधास्वामी २ करने से काम न बनेगा; क्यों कि तुमको इस भवसागर से व यमराज से सतगुरु ही निकाल सकता है। वह सतगुरु कौन है ? वह है सच्चा ज्ञान, सच्चा विवेक और सच्चा अनुभव और यह ज्ञान, विवेक और अनुभव जब मिलेगा जब गुरु से ही मिलेगा।

जो लोग ये समझते हैं कि गुरु मरता है और जन्म लेता है अथवा एक गुरु मरा दूसरा गद्दी नशीन हुआ और ऐसा समझ कर उनको पूजता है तो उसका बेड़ा पार नही होगा।

कबीर साहब का सतगुरु की बाबत कहना है :—

सतगुरु चीन्हों रे भाई ।
सतनाम बिन सब नर बढ़े, नरक पड़ी चतुराई ।
वेद पुरान भागवत गीता, इनको सबै दृढ़ावै ।
जाको जनम सफल रे प्रानी, सो पूरा गुरु पावे ॥
बहुत गुरु संसार कहावे, मन्त्र देत हैं काना ।
उपजें विनसें या भौ सागर, मरम न काहू जाना ।
सतगुरु एक जगत में गुरु हैं, सो भव से कढ़ि हारा ।
कहें कबीर जगत के गुरुवा, मरि मरि लें अवतारा ॥

दृढ़ाने का अर्थ है रटना । उन्ही शब्दों को बार बार बोलना । वेदों का पाठ इसी तरह ८४ के चक्रसे छुड़ाने के लिये दृढ़ाना है । यह नहीं कि वेदों का पाठ गलत है । स्कूल में जो बच्चा पहाड़े बार बार नहीं बोलता अर्थात दृढ़ाता नहीं वह आगे चलकर फेल रहेगा । जब पहाड़े याद हो जायेंगे तब आगे चलेगा इसी प्रकार जब वेदवाणी दृढ़ हो जायेगी तब आगे चल सकेगा । वेद पाठ का महत्व इतना ही है जितना बच्चे के पहाड़े ।

इस सिलसिले में बात याद आ गई । होशियारपुर में एक वृद्ध पुरुष ८२-८३ वर्ष की आयु का है । उसने श्री ब्रह्म शंकर महाराज जी से नाम लिया हुआ था । उनके चोला छूटने पर उसने साहब जी महाराज को व उनके बाद दूसरों को गुरु माना । उनका पोता मेरे पास आया । उसने कहा कि मेरे बाबा इतने गुरुओं से मिलकर भी अशांत हैं । इनको शिकायत है कि सन्त मत को शिक्षा गलत है । सोचता हूँ उसने एक गुरु से नाम लिया, फिर दूसरे को गुरु माना । चूँकि गुरुओं ने यह ख्याल दिया हुआ है कि जब एक गुरु मर

जाता है, उसकी रूह दूसरे गुरु में चली जाती है मगर स गुरु कभी मरता नहीं। सन्त कबीर का भी ऐसा ही कथन है। उनकी तालीम सभी पन्थ वाले मानते हैं। उनके पिछले शब्द 'सतगुरु चान्हों रे भाई' में एक कड़ी आती है।

सतगुरु एक जगत में गुरु है, सो भव से कढ़ि हारा।
कहें कबीर जगत के गुरूआ, मरि मरि ले अवतारा॥

जब एक गुरू की रूह दूसरे चोला में आई तो उसकी रूह बिना मरे हुए दसरे चोलों में नही जा सकती। अफसोस गुरू के रूप को नहीं समझा गया। इन वृद्ध सज्जन ने गुरू के रूप को नहीं समझा और वास्तविक रूप से गुरू धारणा किया इसलिये वह अशांत रहा। मेरी यह डयूटी है कि सच्चा व सही मार्ग बता जाऊँ। बाकी काम तुमको करना है। इस साफ बयानी से मेरी आत्मा पर कोई बोझ नहीं रहता है।

विचारों की फुरना

जब तुम स्वप्न में हो वा अभ्यास में बैठते हो अथवा मृत्यु के लम्बे स्वप्न में हो तो तुम्हारे अन्दर वही फुरकेगा या फुरता है जो तूमने अपने जीवन में किया है या सोचा है या जैसे-जैसे विचारों ने तुम्हारे हृदय में घर किया हुआ है। यदि जीवन में धोके, ईर्ष्या, द्वेष आदि के विचार रहे हैं तो वही रूप बनकर आयेंगे और यदि नेकी भलाई आदि के विचार रहे है तो वे सामने आयेंगे। यदि मैं अपनी मान प्रतिष्ठा के लिये सच्ची बात न कहकर तुमको धोके में रखता हूँ तो वही विचार भयानक रूप रखकर मेरे सामने आयेंगे। मैं उनसे बच कैसे सकता हूँ और तुम भी कैसे बच सकते हो।

मेरी स्त्री को नाम मिला हुआ था। वह स्वप्न में डरा

करती थी। अभ्यास करती तो सांप शेर आदि दिखाई देते और उसे डर लगता था। दातादयाल महर्षि जी महाराज से कहा गया। उन्होंने कहा कि यह इसका प्रालब्ध कर्म है मगर यह तुम्हारी संगत से कट जायेंगे और कभ्यास करने को मना कर दिया।

जब तुम लम्बे स्वप्न में जाते हो तो शरीर तो वहाँ होता नहीं, केवल स्वप्न की फिल्म चलती रहती है। उस स्वप्न की फिल्म से गुरु बच सकता है। गुरु तुमको नाम और ध्यान बता देगा। कोई सँस्कार दे देगा।

धर्म

गरुड़ पुराण में लिखा है कि मनुष्य मरता है तो धर्म ही रक्षा करता है। अब धर्म क्या है धर्म कहते हैं किसी इष्ट अइडियल, नाम विचार, सँस्कार को धारण कर लेना। तुम देखते हो कि जब साधन में बैठते हो तो मन कठिनता से एकाग्र होता है। छलांगें मारता है। तरह तरह के सँकल्प विकल्प उठाता है मगर चूँकि तुमको संस्कार मिला हुआ है तुम गुरु के दिये हुये नाम व रूप को बनाओगे और तुम्हारे चिदाकाश पर जो संस्कार पड़े हैं वह सामने आने लगेंगे। उस नाम और रूप ने जिसको तुमने धारण कर रखा है वह तुमको स्वप्न की फिल्म से निकाल ले जायेगा और इस तरह धर्म तुम्हारा रक्षक और सहायक होगा।

हिन्दुओं में यह पृथा है कि जब प्राणी मरने लगता है तो उससे गौ दान कराते हैं और गौ की पूँछ उसके हाथ में देकर दान करा देते हैं। चूँकि हिन्दुओं में गाय को बहुत पूज्य माना गया है तो मरने वाले के सामने यह गौ का ख्याल दूसरे गन्दे विचारों से बचा देता है और वह स्वप्न की फिल्म से बच जाता है।

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार प[illegible] (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ [illegible] अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है।

दिनांक १५ नव०, १९८७

सुधा मित्तल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

प्रेषक का पता :—

'मनुष्य बनो' कार्यालय

शिव भवन, लेखराज नगर

अलीगढ़—२०२००१ (उ० प्र०)

अवैतनिक सहायक सम्पादक

महेशचन्द्र मीतल

सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक

श्रीमती सुधा मीतल

प्रेषिति संख्या— 176

श्रीमान Sri Chilwar Narsimhlu

Hanmandlu General Stores

V & Po. Banswada - Mandal

Nizamabad. A.P.

503187

Regd. NO L—ALG.28

मुद्रक श्रीमती सुधा मीतल, दातादयाल प्रिंटर्स, लेखराज नगर, अलीगढ़